International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(1): 24-27

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(1): 24-27
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 11-11-2020
Accepted: 19-12-2020

राधा देवी
शोध छात्रा, संस्कृत विभाग, कला संकायन डी.ई.आई. दयालबाग, आगरा, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
राधा देवी
शोध छात्रा, संस्कृत विभाग, कला संकायन डी.ई.आई. दयालबाग, आगरा, उत्तर प्रदेश, भारत

संस्कृत महाकाव्यों में भक्ति का स्वरूप

राधा देवी

प्रस्तावना

भक्ति वह पालन पयस्विनी अनुभूत स्वरूपा है, जिसने दीर्घकालीन भारतीय जीवन दर्शन की गहन अनुभूतियों, संस्कारों एवं परम्पराओं के द्वारा भारतीय जन जीवन दर्शन में एक नवीन चेतना एवं स्फूर्ति का संचार कर उसे रससिक्त कर देती है। भक्ति शब्द की सिद्धि भज सेवायाम् और आदर्णीय भज्जो आमर्दने धातुओं से क्तिन् प्रत्यय करने पर होती है। भज सेवायाम् धातु से स्त्रियांक्तिन् से भाव में क्तिन् प्रत्यय करने पर सेवा, उपासना, गुणकथन आदि अर्थों में भक्ति की सिद्धि होती है।

श्रीमद्भागवत में भक्ति पद का प्रयोग उपलब्ध है–

> भक्तिः आत्मरजस्तमोपहा, मायामोहादिरूपकषाय भंजिका,
> मृत्यु पाशविशातनी, और भवरोगहन्ती।

आचार्य वामन शिवराम आम्टे के अनुसार भक्ति के विविध रूप हैं–

अर्थ –

वियोजन, पृथक्करण, विभाजन, प्रभाग, अंश, हिरसा, उपासना, अनुरक्ति, सेवा, स्वामि भक्ति, सम्मान, पूजा, श्रृद्धा। ऋग्वेद के नासदीय सूक्त के अनुसार जगत और जीवन दोनो के मूल में काम है– ''कामस्तदग्रे समवर्ततााधि मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्'' काम सबका मूल होकर सर्वत्र समाहित है सर्वत्र व्याप्त है। विश्व जनक 'काम' ही आनंद प्राप्ति का आधार है।

ऋग्वेद में भक्ति 'सेवा' अर्थ में मिलती है–

> यथा – ''महस्ते विस्णो सुमति भजामहे'' सायण भाव्य – हे निष्णो!
> सर्वात्मक देव तव सुमतिं सुष्ठुमति शोभात्मिक बुद्धिं वा आ भजामहे सेवामहे वयं यजमाना।

अथर्ववेद – में भक्ति भावना की उत्पत्ति के सम्बन्ध में उल्लेख –

> अन्ति सन्तं न जहाति अन्तिसन्तं न पश्यति।
> देवस्य पश्च काव्यं न ममार न जीर्यति।।

भक्ति का तात्पर्य है '' अनन्यभाव। परम पूज्य परमात्मा के अतिरिक्त किसी दूसरे का भाव मन में न लाना ही अनन्यभाव कहलाता है। अनन्य भक्ति का स्वरूप बताते हुए भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहते है–

> ''मत्कर्मकृत्मत्वरमो मद्भक्तः सङ्गवार्जितः।
> निर्वैरः सर्वभूतेषु यः समामेति पाण्डवः''।।

अर्थात्

जो पुरुष केवल मेरे ही लिए सम्पूर्ण कर्तव्य कर्मो को करता है मेरे परायण है, मेरा भक्त है, अनासक्त है और सभी प्राणियों में वैर भाव से रहित है वही अनन्य भक्ति सम्पन्ना पुरूष मुझको प्राप्त करता है। यद्यपि शास्त्रों में भक्ति शब्द सेवा, आराधना, उपासना, चित्तवृत्ति भेद, विभाग, उपचार आदि अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है। भक्ति के दो रुप हैं उपासना और कैकर्य।

भक्ति उपास्य और उपासक के मध्य भावात्मक सम्बन्ध विशेष है। अतएव 'उप आसनम्' अर्थ के अनुसार उपास्य के समीप बैठना ही उपासना है। अर्थात् सदैव भगवान का स्मरण, भगवान में अखण्ड विश्वास करना, अनवरत उनकी दिव्य स्मृति का होना उपासना है। जिस प्रकार तेल की धारा अविच्छिन्न रहती है, उसी प्रकार जब परमात्मा के अनवरत ध्यान से परमात्मा के साथ मानव हृदय एकाकार हो जाये तव उसका नाम उपासना है।

1. श्रीकृष्ण चरितामृतम् महाकाव्य– यह महाकाव्य श्रीकृष्ण प्रसाद शर्मा धिमिरे से रचित महाकाव्य है इस महाकाव्य में जगत् के कारण भूत परमतत्व श्रीकृष्ण के आलौकिक स्वरूप, मानवेतर बाललीला का विवेचन और परम सद्गुरु स्वरूप भगवान शिव क महिमा वर्णन करते हुए अन्त में उनकी प्राप्ति का एकमात्र भक्ति साधन भक्ति ही माना हैं। एक अनन्य भक्त के रूप में कवि की पराभक्ति इस महाकाव्य में निहित हैं। श्रीकृष्ण नामक तेज सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड कंटाह में प्राप्त है। यद्यपि वह किसी देशकाल की सीमा से आवद्ध नहीं है। फिर भी भगवान शिव की कृपा शक्ति से सीमित हो जाता है– मन–बुद्धि की सीमा में आ जाता है। परमगुरुदेव सच्चिदानन्दमय शिवरुप है उनसे प्राप्त वह कृष्ण तेज अपनी शक्ति से परिपूर्ण होकर यहाँ विराजमान है। वह सच्चिदानन्द स्वरुप, नित्य, अचलानन्दमय, मनोमय, आत्मसुख और कहाँ यह द्रोहपूर्ण सुविस्तृत सांसारिक सुख, जो केबल वर्तमान में ही नहीं, भविष्य में दुःख शोक से भरा हुआ है।
इन सांसारिक दुःखों से मुक्ति का एकमात्र मार्ग श्रीहरि की गति को ही माना गया है–

अस्यांस्थितौ मोहमये प्रपज्चके, स्नेहे च मोहे च विलम्बिते नरि।
एका गति विश्व व्ययो विभुः संहारकः पालक ईश एवं सः।।

2. श्रीकृष्णचरितम्– ''श्रीकृष्णचरितम् महाकाव्य'' में भगवान कृष्ण ही एकमात्र आराध्य है। भक्तों की दृष्टि में भगवान एक हैं, अद्वितीय है, निर्गुण भी है और सगुण भी, वही संसार की पिता का समान रक्षा करता है। इस जगत् का शासक है, घट–घट व्यापी है–

जगन्ति यस्मिन् सविकास मासते, भवन्ति लीलानि चपत्र शाश्वते।
पितवे यो रक्षति तानि तं मुदा, नमामि कृष्णं सगुणञ्च निर्गुणम्।।

अजन्मा, चराचर जगत् के स्वामी, महाद्भुत हरि अपनी माया से प्रकृति को वश में करते हैं तथा पुरूष के देह को धारण करते है तथा भक्तों के दुःख के विनाश में उद्यत तथा पृथ्वी में अधर्म का वर्धन होने पर दुर्जनों पर निग्रह हेतु अवतार लेते है। इसमें गोपियों एवं गोपो की दृष्टि में भगवान कृष्ण ही भजनीय है। संसार के अन्य लोग अपनी रुचि के अनुसार भिन्न–भिन्न देवताओं की सगुण–निर्गुण रुप से उपासना करते हैं, परन्तु गोपियाँ की निर्गुण रुप से उपासना करते हैं, परन्तु गोपियाँ की अनुरक्ति एकमात्र श्रीकृष्ण में ही है वे अपने कृष्ण को चाहती हैं।

3. पार्थ चरितामृतम् महाकाव्य :– इस महाकाव्य में भगवान श्रीकृष्ण और अर्जुन की पारस्परिक शास्वत सख्यशक्ति, भगवान् के दिव्य स्वरूप का विवेचन है। इसमें कवि ने सृष्टि, बन्धन, मोक्ष तथा जीव के स्वरूप का प्रतिपादन करते हुए कहा है कि यह संसार मायाक्रान्त क्षेत्र है, 'पार्थ चरितामृतम्' में जीवके विषय में कहा गया है कि यह जीव अणु और प्रतिदेहामित्र, ज्ञानस्वरूप, भगवदधीन, संयोग–वियोग सनाथ, सार्वत्रिक ज्ञान शून्य और अल्पज्ञ है–

जीवश्च प्रतिदेश्ठे ह्यणुरथ प्रत्येकदेहं पृथक्
ज्ञाता ज्ञानविमर्शकश्च परमोऽधीनों हरेः सम्मतम्।
अस्मित्रेव वियोगयोगसहनं सर्वत्रसंलक्ष्यते
एवं सर्वविशून्यबोध परकः स्त्रोकज्ञ एवोच्यते।।

4. 'वामनावतरणम्' – 'वामनावतरणम्' महाकाव्य में भगवान विष्णु के दिव्य रहस्यों तथा भक्ति भाव के रहस्य और भक्त के लिए अत्यावश्यक तत्वों का उजागर है। इसमें भगवान् विष्णु अपने ही प्रभाव से बढे हुए, आदि, मध्य तथा अंत से परे, वेद त्रयी के स्वामी, ब्रहण्यदेव, त्रिनाम, वेद गर्भ यज्ञ स्वरुप, प्रत्यक्ष–परोक्ष रूप, भूत एवं भविष्य में प्रवृत्त, अज्ञान तथा विज्ञान उभय रुप, सृष्टि के निमित्त उपादान कारण है। अपनी माया के वशीभूत होकर ही उन्होंने चिद्विगृह मानव रुप धारण किया है। गुणातीत स्वरूप वाले, परब्रह्मस्वरूप, अक्षय, निर्विकार तथा स्वयं चैतन्याधिष्णन, त्रिलोकी के नियन्ता है।

5. वामनचरितम्– 'वामनचरितम्' में भक्ति के नवीन तत्वों, महाकाव्य सिद्धान्तों, ईश्वर का स्वरुप एवं ईश्वरीय कृपा का रहस्य उद्घाटित हुआ है चराचर के आत्मरूप, विश्व के नियन्ता सर्वव्यापी भगवान विष्णु हैं। भजन करने वालों के स्वामी है। शरण प्रदायी है सदानन्दमय, पूर्ण, समत जगत् के लिए वन्दनीय, सुखद, इस लोक के आर्त्तप्राणियों को शरण देने वाले, मुक्ति के धाम कृपा से परिपूर्ण है। भक्तों की कामना को पूर्ण करने वाले हैं। इस संसारिक चक्र से दुखी लोग विष्णुलोक में आकर फिर संसार में नहीं गिरता अर्थात् मुक्त हो जाता है।

''यत्रागता नैव पतन्ति लोके, संसारचक्रे परिभूयमानाः''।।

6. द्वारकाधीश :– द्वारकाधीश महाकाव्य में डॉ. वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदी ने द्वारकाधीष भगवान श्रीकृष्ण के प्रति भक्तिभाव रूप में 'द्वारकाधीशाष्टकम्' प्रस्तुत किया है। जिसमें भगवान् कृष्ण की विराटता व व्यापकता का वर्णन करते हुए अनन्य भक्तिभाव से कवि ने उनके चरण कमलों की शरण ली है। जो शीघ्र ही सांसारिक भय, भार का हरण करने वाले हैं, दुःखों के विनाशक, ब्रह्मादि देवों द्वारा वन्दित, सृष्टि–स्थिति–प्रणय के कारण भूतः त्रैलोक्य का पदक्रमण करते वाले, योगियों में श्रेष्ठ, जगत के स्वामी हैं। ऐसे दिव्य स्वरुप से युक्त द्वारकानाथ के श्रेष्ठ स्वरूप का दर्शन करने वाला भक्त योगीश्वरों की दुर्लभी भी विष्णुपद को प्राप्त कर लेता है–

श्री द्वारकानाथ वरस्वरुपं, पश्र्यान्त ये भक्तजनाः कलौ वे।
गच्छन्ति ते विष्णुपदं नृदैव, योगीश्वराणामपि दुर्लभी तत्।।

प्रभु अपने भक्तों में अनुरक्त रहते हैं। यदि कोई ब्रहाधन से पुष्ट, व्यभिचार, क्रूर तथा पिशाचों की भाँति निर्दय भी है। वे भी ईश्वर का नाम जपकर मोक्ष प्राप्त करता है। अतः भगवान की सेवा, हरिनाम से भक्त सांसारिक तापों से मुक्त हो जाता है।

8. भरत चरितम् महाकाव्य– इस महाकाव्य में भक्त गुणों से आविष्ट राजा भरत की भगवान विष्णु के प्रति अनन्य भक्ति की पराकाष्ठा दृष्टव्य है, जो एकमात्र भगवद् भक्ति के लिए लोकनिन्दा की परवाह न करते हुए देश–देशान्तर में तिरस्कार, अपमान को सहन करते हुए अपने शरीर को भी ईश्वर के प्रति समर्तित कर दिया और भक्ति का साधन बना लिया। भगवद् भक्ति के कारण ही अपने सांसारिक परिवारिक जनों का परित्याग कर दिया है। लेकिन राजा भरत की एक तुच्छ सी भूल का परित्याग और उन्हे दूसरे जन्म में मृग योनि की प्राप्ति हुई। इस महाकाव्य में मानव की स्वार्थपरता का यथार्थ परक वर्णन करते हुए कवि ने ईश्वर भक्ति को प्रेरित किया है।

सुदामाचरितम् :– इस महाकाव्य में माता जगदम्बा, भगवान विष्णु की महिमा, स्वरूप का वर्णन तथा भगवान श्रीकृष्ण और सुदामा की परस्पर सखा भक्ति का परिदृश्यन है। एक भक्त और भगवान का परस्पर अगाध सम्बन्ध प्रारंभ से अंत तक इस महाकाव्य में दृष्टिगोचर होता है। इस सृष्टि का चित्रकाल से शासन करने वाली, मन में विराजमान, कल्याणकारिणी, विरह वेदना से व्याकुल जनमानस के जीवन में पुष्पमयी उल्लास का परिवर्धन करने वाली, भयंकर कंटक युक्त सांसारिक कष्टों से मुक्ति देने वाली माता जगदम्बा है। भगवान विष्णु की सर्वव्यापकता का वर्णन करते कवि कहते हैं कि भगवान विष्णु समस्त कोश से पूर्ण सर्वव्यापक हैं तथा सांसारिक पाथिको का मनोविनोद करने वाले हैं।

सीताचरितम् :– इस महाकाव्य में देवी सीता भक्त के रूप में उपस्थित हैं जो अपने परम आराध्य भगवान श्रीराम की भक्ति में लीन रहती है, समाधि हो जाती है।

प्राणी हित मानसा समाधि पितृगृहशिक्षित मन्त्र साधयन्ती।
प्रशमित – परितापमात्मरुपं प्रियतममैक्षत सा सदा विराजे।।

अर्थात् पिता के धर में शिक्षित देवी सीता चित्र को प्रणिहित कर समाधि को साधती थी और रात्रि के प्रत्येक अवसानों में समस्त परितापों से दूर आत्मरूपी प्रियतम का दर्शन करती थी।
इसलिए ईश्वर साक्षात्कार व प्राप्ति के लिए चित्त प्राणिधान को मुख्य साधन माना गया है। महाकाव्य में यह वर्णित है कि जीवन के बाद न प्रजा, न तो बन्धु बांधद ही प्राणी के साथ जाते है उस समय वह एकमात्र निशुद्ध और निष्पाप चित्त ही साक्षी का स्थान गृहण करता है। अतः उनके प्रति उपासना, स्मरण, पूजा, हृदय में धारण करना, प्रणाम, वन्दन, शरण, ध्यान, समर्पण इत्यादि भक्ति के विविध रुपों का वर्णन है।

जानकी जीवन :– जानकी जीवन महाकाव्य में भगवान राम और सीता के सत्कार्यों सद्चरित्र द्वारा भगवद् भक्ति की भावना को उद्भाषित किया गया है। त्रिलोक के लिए शल्यभूत, दशानन रावण का संहार करने के लिए तथा अपने तथा अपने सत्कर्मो में संसार में उच्चादर्शो की संस्थापना हेतु एवं देवताओं की परमभक्ति स्वीकार कर श्रीराम इस धरा –धाम में अनतीर्ण हुए। वह तो साक्षात् समस्त लोको के अधीस्वर दीनबन्धु हैं। अतः उनकी शरण में जाना, परमेस्वर में लीन चित्तवृन्ति प्रभु के चरण कमलों को हृदय में धारण करना सर्वात्मना रूप से समर्पण श्रृद्धा इत्यादि भक्ति की विभिन्न भावनाओं का वर्णन किया गया है। इसलिए मनसा–वाचा–कर्मणा सर्वथा पवित्र अन्तः करण'' तथा ईश्वर के प्रति समर्पण, स्मरण, श्रवण और प्रणाम भाव उद्भूत होने पर मानवबुद्धि की जड़ता विनष्ट हो जाती है, यही कारण है कि जब ब्रह्मर्षि वशिष्ठ ने भगवान राम व देवी सीता के चरितगान से रजक के संदेह को दूर किया, तब भगवान राम से एक दास की भाँति स्व उद्धार की प्रार्थना करता है–

जातं पुनर्जन्म ममाध देव! प्रत्नं वपुः किन्तु नवश्चिदंशः।
जातम्मया राधवदिव्यतत्व समुद्धराऽङ्यम्बु जलीन गात्रम्।।

श्रीराधाचरितम् महाकाव्य :– श्री 'राधाचरितम्' महाकाव्य में राधा–कृष्ण का अद्वैतत्व, प्रेम रहस्याख्यान, अलौकिक महारास लीला तथा ईश्वरीय तत्व के प्रति भक्ति के विविध रुपों का वर्णन निहित है।

भगवान श्रीकृष्ण और राधा वस्तुत :– एक ही तत्व है वही वृजमण्डल में द्विधा रूपों में विभक्त हुआ।

एक कृष्णतत्व और दूसरा राधा तत्व :–

रहस्यमेकं श्रृणुतार्यवृता यत्तत्वमेकं श्रुतयो वर्दान्त।
द्वेधा तदेव बृजमण्डलेऽभूद् राधा द्वितीय वरसानुसानौ।।

वह आद्लादिनी शक्ति राधा श्रीकृष्ण के वक्षस्थल में स्थित होकर माधव का रमण करती हे जिस प्रकार शक्ति से रहित होने पर शिव शव है अतः उस शक्ति से ही शक्ति का महत्व है। इसलिए कृष्ण में परायण राधा को कृष्ण कहकर कृष्ण और कृष्णा में अभेद प्रतिपादित किया गया है।
भक्तों की इच्छा से ही उस परम तत्व ने स्त्री पुरुष रुप धारण किया है। स्त्री रूप को प्राप्त करने पर राधा और पुरुष रूप को प्राप्त कने पर माधव है–

भक्तस्य कामाय विभिन्न रुप स्त्री पुंसभावं मधुरं दधासि।
त्वं राधिका ऽऽसादितदाररुपा पुभ्भावमासाध च माधवस्त्वम्।।

जिसे कवि ने रस तत्व अर्थात् आनंदमय रुप माना है। राधा के क्रोड में समुपविष्ट और राधा के मुख कमल पर शोभामान स्वेद बिन्दु को पोंछते हुए श्रीकृष्ण ने पराभक्ति व प्रेम को प्राप्त किया। भगवान श्रीकृष्ण व राधा की प्रेम लीला ऐसी प्रतीत हो रही है कि माया परब्रह्म में लीन नहीं है, अपितु ब्रह ही माया में लीन है –

''माया परब्रह्मणि नैव लीना व्यत्यासमजैव निभालयामः।
श्री राधा चरितम् महाकाव्य में श्रीकृष्ण के प्रेम का वर्णन है।

शुम्भवध महाकाव्य – शुम्भवध महाकाव्य में देवी दुर्गा के अद्भुत कार्यो व बहुविध स्वरूप का विवेचन करते हुए उनके प्रति परम भक्ति भावना अभिव्यक्त हुई है। शैलपुत्र, ब्रह्मचारिणी सिद्धिदात्री आदि नौ स्वरूपों से युक्त देवी दुर्गा ने आततायी असुरों का संहार करके समाज का उद्धार किया है।

विन्धवासिनी विजयम् – ''विन्धयवासिनी विजय'' महाकाव्य में भक्तों की परमभक्ति से भावित जगदम्बिका के स्वरूप का प्रतिपादन है –

साङ्खया वदन्तिभवती प्रकृतिं पुराणी वेदान्तिनः, श्रुतिमतां कथयन्ति मायाम्।
शक्तिं परां पशुपते र्निगदन्ति शैना, अस्मत्कृते तनुमती त्वमेव।।

अर्थात् :– सांख्य जिस तत्व को पुराणी प्रकृति कहता है, वेदान्ती जिसको माया कहता है, शैव जिसे पशुपति की परा शक्ति कहते हैं। लेकिन भक्तों के लिए वह करुणा स्वरुपा है।
आज भौतिकवाद और विज्ञान प्रधान युग में मानव की आवश्यकता के अनुरुप कवियों ने भक्तिपरक महाकाव्यों सीताचरितम् गणपति संभवम्, श्रीकृष्णचरितामृतम्, शिवकथामृतं, श्रीराधाचरितम्, श्रीकृष्णचरितम् शुम्भ वध महाकाव्य, विन्ध्यवासिनी विजयम् द्वारकाधीश, जानकी जीवन, वामनावरणम्, सुदामचरितम्, वामनचरित भागीरथी दर्शनम्, भरतचरितम्, पार्थचरितामृतम्, परशुराम विजयम् और रामकीर्ति आदि का सृजन किया। इसमें परिस्थितियों के अनुरुप भक्तिकी महिमा परिदृश्यमान हुई है तथा साथ ही इन कवियों के गंथों में युगीन प्रभान भी दृष्टिगोचर होता है। पूर्वाचार्यों द्वारा मान्यभक्ति के तत्वप्रेम, शरणागति, श्रृद्धासंवा, स्तुति, दैन्यभाव, ध्यानपोग, स्तुति, भजन, जप, ईश दर्शन और नवधा भक्ति आदि का प्रभाव भी परिलक्षित हुआ है। इसके अतिरिक्त कैंकर्य मान, वात्सल्यभाव, प्रतिमा–पूजन, तीर्थाटन,–तीर्थवास, षोडशोपचार, शिवलिंग, दर्शन महाकाव्य और नदी स्नान इत्यादि तत्व भी भक्ति रुप में प्राप्त होते हैं साथ ही मन रहित इंन्द्रियों पर नियमन, संतोष की भावना निश्वार्थ भाव, लोकसेवा, सांसारिक विषय वासनाओं का परित्याग, विनम्र स्वभाव और धैर्य जैसी भावना को भी भक्त के लिए आवश्यक माना गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीमद्भागवत पुराण 3/21

2. संस्कृत हिन्दी कोष पृ0सं0 726
3. ऋग्वेद 1/156/3
4. अथर्ववेद 10/8
5. गीता 11/55
6. श्रीकृष्णचरितामृतम् 1/8
7. श्रीकृष्णचरितम् 1/4
8. पार्थचरितामृतम् 5/27
9. वामन चरितम् 2/7
10. सीताचरितम् 6/43
11. जानकी जीवन 18/102
12. राधा चारितम् 7/31
13. राधा चरितम् 6/10
14. राधा चरितम् 6/21
15. विन्यवासिनी विजयम् 6/49